मालवा से नगरधन (रामटेक) और फिर वैनगंगा क्षेत्र तक: छत्तीस कुल पोवार (पंवार) समाज की ऐतिहासिक-सांस्कृतिक यात्रा

✍ **डॉ. हरगोविंद चिखलु टेंभरे,**
एम.ए.(हिंदी, राजनीति शास्त्र),नेट (शिक्षण शास्त्र)एम. फिल.,
पीएचडी, (हिंदी) राष्ट्रसंत तुकड़ोजी महाराज नागपुर विश्वविद्यालय, नागपूर

पोवार समाज का इतिहास अत्यंत प्राचीन, समृद्ध और गौरवशाली रहा है। इसकी उपस्थिति वैदिक युग से लेकर मध्यकाल तक केवल एक जातीय या वंशीय पहचान मात्र नहीं रही, बल्कि यह एक सजीव सांस्कृतिक चेतना और क्षत्रिय आत्मगौरव का प्रतीक रही है। छत्तीस कुलों की विशिष्ट सामाजिक संरचना के साथ यह समाज आरंभ में मालवा क्षेत्र में सुदृढ़ रूप से स्थापित था। समय के प्रवाह में यह समाज नगरधन (वर्तमान रामटेक) के सांस्कृतिक बिंदु को स्पर्श करता हुआ वैनगंगा की घाटियों तक प्रवास करता गया। इस ऐतिहासिक यात्रा में, चाहे स्थान बदले हों या राजनीतिक परिस्थितियाँ, पोवार समाज ने सदैव अपने क्षत्रिय धर्म, कुल मर्यादा, और परंपरागत मूल्यों को अक्षुण्ण रखा। यही अनुशासन और उत्तरदायित्व इस समाज को केवल एक जाति नहीं, बल्कि एक प्रेरक परंपरा का वाहक बनाते हैं।

पोवार समाज की यह ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक यात्रा केवल भौगोलिक विस्तार की कथा नहीं है, बल्कि यह धर्म, शौर्य, संस्कृति और सामाजिक संगठनों के माध्यम से पीढ़ियों को जोड़ने वाली एक जीवंत परंपरा की प्रतीक है। इस समाज की छत्तीस कुलीय संरचना न केवल सामाजिक अनुशासन की एक विशिष्ट प्रणाली है, बल्कि यह उसकी वैदिक मूल चेतना, क्षत्रिय मर्यादा और सांस्कृतिक अस्मिता का दर्पण भी है।

प्रस्तुत शोधलेख का उद्देश्य इस गौरवशाली समाज की ऐतिहासिक यात्रा का एक प्रामाणिक, वस्तुनिष्ठ और शोधपूर्ण विश्लेषण प्रस्तुत करना है। इसमें समाज की कुल परंपरा, सांस्कृतिक चेतना, भाषिक विकास और संगठित सामाजिक ढांचे को तथ्यों, ग्रंथों और परंपराओं के आलोक में समझने का प्रयास किया गया है। यह अध्ययन वर्तमान पीढ़ी को न केवल अपने अतीत से जोड़ने का सेतु बनेगा, अपितु उन्हें अपने प्राचीन गौरव को पुनः पहचानने और उसे जागरूकता, सम्मान और उत्तरदायित्व के साथ जीवंत रखने की प्रेरणा भी देगा।

छत्तीस कुलीय पोवार (पंवार) समाज की ऐतिहासिक यात्रा मध्य भारत की सांस्कृतिक एवं राजनीतिक परतों को गहराई से स्पर्श करती है। यह समाज प्राचीन अग्निवंशी परमार वंश की संतति है, जिसकी पुष्टि 1826 में प्रकाशित ट्रैन्ज़ैक्शन्स ऑफ द रॉयल एशियाटिक सोसाइटी (पृष्ठ 157–158) में स्पष्ट रूप से की गई है। उक्त ग्रंथ में उल्लेख है कि परमारों की छत्तीस शाखाएँ थीं, जिन्हें चार अग्निकुलों में स्थान प्राप्त था। साथ ही यह टिप्पणी भी की गई है कि "अब उनमें से कुछ ही मिलते हैं", यह वाक्य इस ऐतिहासिक तथ्य की सशक्त पुष्टि करता है कि परमार वंश की अनेक शाखाएँ कालक्रम में उत्तर भारत से दक्षिण और विशेषतः मध्य भारत की ओर स्थानांतरित हुई। यह ऐतिहासिक प्रमाण यह भी दर्शाता है कि पोवार समाज का मूल प्रवास मालवा क्षेत्र से होकर मध्यभारत के वैनगंगा अंचल तक हुआ, जहाँ यह समाज केवल बसा नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, प्रशासनिक और सामाजिक दृष्टि से अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित करता गया।

इसके उपरांत, आर. वी. रसेल ने अपनी प्रसिद्ध कृति दि ट्राइब्स ऐंड कास्ट्स ऑफ़ द सेंट्रल प्रोविन्सेज ऑफ़ इंडिया (खंड 4, पृष्ठ 330) में वैनगंगा क्षेत्र में निवासरत पोवारों की सामाजिक संरचना का उल्लेख करते हुए लिखा है

कि इनकी जनसंख्या उस काल में लगभग एक लाख पचास हजार थी, और ये प्रमुखतः ग्रामस्वामी एवं समृद्ध कृषक थे। रसेल ने यह भी स्पष्ट किया कि यह वीर राजपूत वंश उत्तर, दक्षिण एवं पूर्व भारत की ओर आजीविका की तलाश में निरंतर प्रवास करता रहा, तथा जिन-जिन क्षेत्रों में पहुँचा, वहाँ अपनी क्षत्रिय छवि और ऐतिहासिक छाप को स्थायित्व प्रदान करता गया। वैनगंगा घाटी में बसे पोवार अब एक संगठित जाति के रूप में विकसित हो चुके हैं, जिनमें किसी प्रकार की उपशाखाएँ विद्यमान नहीं हैं, बल्कि इनमें केवल छत्तीस बहिर्विवाही कुलों की सामाजिक संरचना है। इन कुलों के नाम प्राचीन राजपूत वंशों, ऐतिहासिक गाँवों, पदवियों अथवा जातीय संबोधनों से व्युत्पन्न हैं, जो इस समाज की ऐतिहासिक विविधता और क्षेत्रीय अनुकूलन को दर्शाते हैं।

इस क्षत्रिय समाज की सांस्कृतिक दिव्यता और वैदिक मूल चेतना को एक संस्कृत श्लोक में अभिव्यक्त किया गया है।

"षट्त्रिंशत्कुलसम्भूताः पंवारा: क्षत्रियर्षभाः।
धर्मरक्षा-पराः शूराः सदाचारनिवासिनः॥"

अर्थात जो पंवार (पोवार) छत्तीस कुलों से उत्पन्न हुए हैं, वे क्षत्रियों में श्रेष्ठ हैं, धर्म की रक्षा के लिए सदैव तत्पर, शूरवीर तथा सदाचार में स्थित रहने वाले हैं। यह श्लोक केवल एक काव्यात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि पोवार समाज की ऐतिहासिक पहचान, धार्मिक प्रतिबद्धता, सामाजिक मर्यादा और आचार-संहिता का एक सजीव घोष है। इस श्लोक के माध्यम से हम न केवल इस समाज के गौरव को समझ सकते हैं, बल्कि यह भी अनुभव करते हैं कि यह समुदाय केवल वंश परंपरा का प्रतिनिधि नहीं, बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक उत्तरदायित्व का वाहक रहा है। इसकी धर्मनिष्ठा, क्षत्रिय तेज और आचारशीलता इसे अन्य समाजों से विशिष्ट बनाती है।

इस समाज की ऐतिहासिक चेतना केवल वैदिक और मध्ययुगीन ग्रंथों तक सीमित नहीं रही, बल्कि वह लोक परंपरा, स्मृति और सांस्कृतिक बोध में भी जीवंत बनी रही। सन् 1892 में प्रकाशित "पंवार धर्मोपदेश" नामक एक अत्यंत महत्वपूर्ण कृति में, स्वर्गीय श्री लखाराम तुरकर (राजस्व निरीक्षक) ने पोवार समाज के प्रति एक चेतावनी स्वरूप दोहा प्रस्तुत किया-

"जान लो छत्तीस कुरि बखान, राखी इनसे ध्यान।"

इस प्रेरणादायक दोहे के माध्यम से लखाराम जी ने स्पष्ट किया कि पोवार समाज की छत्तीस कुल परंपराएँ किसी तीर्थ से कम नहीं हैं, इन्हें जानना, समझना और सम्मानपूर्वक स्मरण रखना हर पोवार का सांस्कृतिक कर्तव्य है। यह केवल एक सामाजिक निर्देश नहीं था, बल्कि पीढ़ियों को जोड़ने वाला एक आध्यात्मिक संदेश और सांस्कृतिक उत्तरदायित्व का उद्घोष था, जो आज भी उतना ही प्रासंगिक है।

बाद की विद्वत्तापूर्ण कृतियों ने पोवार (पंवार) समाज की ऐतिहासिक चेतना को न केवल जीवित रखा, बल्कि उसे नई दृष्टि और व्यापक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया। श्री महेन पटले द्वारा रचित "पोवार" (2022) इस समाज की उत्पत्ति, संघर्ष, और उत्कर्ष की समग्र ऐतिहासिक यात्रा को सजीव करता है। इसमें छत्तीस कुलों की परंपरागत संरचना, उनके गोत्र-आधारित सामाजिक तानेबाने, तथा क्षेत्रीय विस्तार को क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत किया गया है। यह ग्रंथ न केवल वर्णनात्मक है, बल्कि विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण से भी समृद्ध है।

इसी क्रम में, इतिहासकार श्री ऋषि बिसेन की प्रामाणिक कृति "मध्यभारत में पंवार (पोवार) समाज" (2025, ISBN: 978-93-342-7498-1) विशेष उल्लेखनीय है। यह पुस्तक पोवार समाज के मालवा–राजपूताना क्षेत्र से मध्यभारत में क्रमिक स्थानांतरण, वहाँ के स्थानीय राजाओं के साथ हुए सैन्य और राजनीतिक गठबंधनों, तथा उनके

माध्यम से प्राप्त राजकीय अधिकारों और ज़मीनी बसाहट की ऐतिहासिक प्रक्रिया का गंभीर अध्ययन प्रस्तुत करती है। यह कृति समाज के उस दौर को उजागर करती है जब पोवारों ने केवल अस्तित्व नहीं, बल्कि ऐतिहासिक नेतृत्व और प्रशासनिक भागीदारी भी अर्जित की। साथ ही, "पोवारों का इतिहास", "अनुसंधान", "पोवारी धरोहर", "पोवारी भाषा संवर्धन", "पुरखा इनको गौरवशाली इतिहास", "पंवार जाति का इतिहास", "पंवार गाथा", तथा "भोज पत्र" जैसी महत्त्वपूर्ण कृतियाँ पोवार समाज के वैदिक कालीन अस्तित्व, छत्तीस कुलों की बहिर्विवाही सामाजिक संरचना, और उसके हजारों वर्षों की सांस्कृतिक निरंतरता के प्रामाणिक साक्ष्य प्रस्तुत करती हैं। ये ग्रंथ मात्र ऐतिहासिक दस्तावेज नहीं, बल्कि समाज की आत्मा को शब्दबद्ध करने वाले साहित्यिक स्तंभ हैं, जो पीढ़ियों तक मार्गदर्शक बनकर समाज की स्मृति में अमर रहेंगे।

पोवार समाज की कुल परंपरा छत्तीस प्रतिष्ठित कुलों में निहित मानी जाती है, जिनकी ऐतिहासिक पहचान और सामाजिक स्वीकृति लंबे समय से विद्यमान रही है। ये कुल इस प्रकार हैं, अम्बुले (अमुले), बघेले (बघेल), भगत (भक्तवर्ती), भैरम, भोएर, बिसेन, बोपचे, चौहान, चौधरी, डाला, तुरकर, गौतम, हनवत, हरिनखेड़े, जैतवार, कटरे, कोल्हे, क्षीरसागर, पटले, परिहार, पारधी, पुण्ड, राहंगडाले, येड़े, रिनायत, राणा, शरणागत, सहारे, सोनवाने, ठाकरे (ठाकुर), टेम्भरे, रावत, फरीदाले, रणमत, रनदीवा और राजहंस। हालाँकि उपर्युक्त सभी 36 कुलों का ग्रंथों और परंपरा में उल्लेख मिलता है, तथापि रावत, फरीदाले, रणमत, रनदीवा और राजहंस कुल वैनगंगा घाटी क्षेत्र, विशेषतः बालाघाट, गोंदिया, सिवनी और भंडारा जिलों में स्थायी रूप से स्थापित नहीं हुए। फलस्वरूप, इन क्षेत्रों में निवासरत पोवार समुदायों में विवाह संबंध मुख्यतः उन 31 कुलों के भीतर ही स्थापित होते हैं, जो स्थानीय परंपरा और सामाजिक व्यवहार में सक्रिय रूप से प्रचलित हैं। यह कुलीय व्यवहार समाज की बहिर्विवाही पद्धति को बनाए रखने की एक ऐतिहासिक और सांस्कृतिक व्यवस्था है।

गोरेगांव क्षेत्र के कुछ कटरे कुल के पोवार तथा वारासिवनी–कटंगी क्षेत्र के कुछ पटले कुल के पोवार स्वयं को ‘देशमुख’ उपनाम से संबोधित करने लगे हैं। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि 'देशमुख' ऐतिहासिक रूप से केवल एक प्रशासनिक उपाधि रही है, यह किसी कुल, गोत्र या वंश की संज्ञा नहीं रही। इसी प्रकार, समाज के कुछ वर्गों में हाल के वर्षों में कुल नामों में ‘कर’ प्रत्यय जोड़ने की प्रवृत्ति उभरती दिखती है, जैसे, पारधीकर, येड़ेकर आदि। राणा कुल के कुछ लोग स्वयं को 'राणे' और बिसेन कुल के कुछ लोग 'बिसने' कहने लगे हैं।

यह प्रवृत्ति समकालीन सामाजिक पहचान और स्थानीय भाषाई अनुकूलन की प्रक्रिया का संकेत है, जो जातीय परंपरा और प्रशासनिक इतिहास के सम्मिलन से उत्पन्न हुई है। यद्यपि यह नामकरण सामाजिक स्वीकार्यता प्राप्त करता है, फिर भी ऐतिहासिक अनुसंधान के लिए मूल कुल संरचना का ज्ञान और संरक्षण अत्यंत आवश्यक है, जिससे पीढ़ियों को अपनी वास्तविक सांस्कृतिक जड़ें पहचानने में सहायता मिल सके।

यह शोधलेख केवल अतीत का वर्णन नहीं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए एक सांस्कृतिक संकल्प है। यह पोवार समाज और उसकी राजपूताना क्षत्रिय पहचान को स्मरण कराते हुए, आज की पीढ़ी से आह्वान करता है कि वह इस गौरवशाली विरासत को पहचानें, समझें और सहेजें। यह पहचान केवल इतिहास का एक पृष्ठ नहीं है, बल्कि हमारी आत्मा की आवाज़, परंपरा की पुकार, और उत्तरदायित्व की कसौटी है। पोवार समाज की छत्तीस कुलीन क्षत्रिय परंपरा वैदिक मूल, अग्निवंशी गौरव, और राजपूत साहस की सजीव अभिव्यक्ति है, जो मध्यभारत की सांस्कृतिक चेतना में आज भी धड़क रही है।

आज जब समाज भाषाई, प्रशासनिक और आधुनिक प्रवृत्तियों से अपनी जड़ों से दूर होता जा रहा है, तब यह अत्यावश्यक हो गया है कि हम अपने वास्तविक क्षत्रिय स्वरूप को पुनः आत्मसात करें, और अपने पूर्वजों के मार्ग का

अनुसरण करते हुए अपनी पहचान को अक्षुण्ण रखें। छत्तीस कुलों की यह सामाजिक व्यवस्था कोई साधारण परंपरा नहीं, बल्कि हजारों वर्षों से चली आ रही एक गहन सांस्कृतिक व्यवस्था है, जो पोवार समाज को उसकी अस्मिता, आत्मगौरव, और ऐतिहासिक अधिकार से जोड़ती है। यह संरचना केवल विवाह व्यवस्था नहीं, बल्कि एक धर्मशास्त्रीय और सामाजिक अनुशासन है, जो क्षत्रिय संस्कृति की रीढ़ है। यह हम सबका कर्तव्य है कि हम अपने समाज की मूल कुल परंपरा, नाम, भाषा और संस्कृति को उस रूप में सुरक्षित रखें जैसा हमें अपने पूर्वजों से प्राप्त हुआ है।

आइए, हम यह संकल्प लें कि हम अपने बच्चों को केवल नाम नहीं, बल्कि एक जीवंत, प्रामाणिक और गौरवशाली पहचान सौंपेंगे। हम अपने इतिहास को मिटने नहीं देंगे, बल्कि उसे अपने कर्म, आचरण और धर्म से जीवित रखेंगे। पोवार समाज और उसकी राजपूताना क्षत्रिय पहचान ही हमारा गौरव है, यही हमारा धर्म है, और यही हमारी पीढ़ियों के लिए सच्ची विरासत है।

संदर्भ:

1. Transactions of the Royal Asiatic Society, 1826, पृष्ठ 157–158
2. Russell, R. V. (1916). The Tribes and Castes of the Central Provinces of India (Vol. IV, p. 330). मैकमिलन एंड कंपनी
3. पंवार लखाराम तुरकर. धर्मोपदेश (1892)., स्व. श्री लखाराम पंवार, राजस्व निरीक्षक
4. भोज पत्र स्मरण ग्रंथ (1986)
5. पटले, जयपाल सिंह. पंवार गाथा (2006)
6. पटले, महेन. पोवार (2022)
7. पटले, ओंकारलाल. Powaron Ka Itihas (2023), Anusandhan (2024), Powari Bhasha Samvardhan (2022)
8. बिसेन, ऋषि. Powari Sanskrati (2021), Powari Dharohar (2023), मध्यभारत में पंवार (पोवार) समाज (2025), ISBN: 978-93-342-7498-1
9. बिसेन, गोवर्धन. पुरखाइनको गौरवशाली इतिहास (2024)